कुँवर नारायण 3

जन्म : *19 सितंबर, सन् 1927* (उत्तर प्रदेश)
प्रमुख रचनाएँ : *चक्रव्यूह* (1956), *परिवेश:हम तुम, अपने सामने, कोई दूसरा नहीं, इन दिनों* (काव्य संग्रह); *आत्मजयी* (प्रबंध काव्य); *आकारों के आस-पास* (कहानी संग्रह); *आज और आज से पहले* (समीक्षा); *मेरे साक्षात्कार* (सामान्य)
प्रमुख पुरस्कार : *साहित्य अकादेमी पुरस्कार, कुमारन आशान पुरस्कार, व्यास सम्मान, प्रेमचंद पुरस्कार, लोहिया सम्मान, कबीर सम्मान, ज्ञानपीठ पुरस्कार*

न जाने कब से बंद / एक दिन इस तरह खुला घर का दरवाज़ा /
जैसे गर्द से ढँकी / एक पुरानी किताब

गर्द से ढँकी हर पुरानी किताब खोलने की बात कहने वाले कुँवर नारायण ने सन् 1950 के आस-पास काव्य-लेखन की शुरुआत की। उन्होंने कविता के अलावा चिंतनपरक लेख, कहानियाँ और सिनेमा तथा अन्य कलाओं पर समीक्षाएँ भी लिखीं हैं, किंतु कविता की विधा को उनके सृजन-कर्म में हमेशा प्राथमिकता प्राप्त रही। नयी कविता के दौर में, जब प्रबंध काव्य का स्थान प्रबंधत्व की दावेदार लंबी कविताएँ लेने लगीं तब कुँवर नारायण ने ***आत्मजयी*** *जैसा प्रबंध काव्य रचकर भरपूर प्रतिष्ठा प्राप्त की। आलोचक मानते हैं कि उनकी "कविता में व्यर्थ का उलझाव, अखबारी सतहीपन और वैचारिक धुंध के बजाय संयम, परिष्कार और साफ़-सुथरापन है।" भाषा और विषय की विविधता उनकी कविताओं के विशेष गुण माने जाते हैं। उनमें यथार्थ का खुरदरापन भी मिलता है और उसका सहज सौंदर्य भी। सीधी घोषणाएँ और फ़ैसले उनकी कविताओं में नहीं मिलते क्योंकि जीवन को मुकम्मल तौर पर समझने वाला एक खुलापन उनके कवि-स्वभाव की मूल विशेषता है। इसीलिए संशय, संभ्रम प्रश्नाकुलता उनकी कविता के बीज शब्द हैं।*

कुँवर जी पूरी तरह नागर संवेदना के कवि हैं। विवरण उनके यहाँ नहीं के बराबर है, पर वैयक्तिक और सामाजिक ऊहापोह का तनाव पूरी व्यंजकता में सामने आता है। एक पंक्ति में कहें तो इनकी तटस्थ वीतराग दृष्टि नोच-खसोट, हिंसा-प्रतिहिंसा से सहमे हुए एक संवेदनशील मन के आलोड़नों के रूप में पढ़ी जा सकती है।

यहाँ पर कुँवर नारायण की दो कविताएँ ली गई हैं। पहली कविता है– ***कविता के बहाने*** *जो* ***इन दिनों*** *संग्रह से ली गई है। आज का समय कविता के वजूद को लेकर आशंकित है। शक है कि यांत्रिकता के दबाव से कविता का अस्तिव नहीं रहेगा। ऐसे में यह कविता–कविता की अपार संभावनाओं को टटोलने का एक अवसर देती है।* ***कविता के बहाने*** *यह एक यात्रा है जो चिड़िया, फूल से लेकर बच्चे तक की है। एक ओर प्रकृति है दूसरी ओर भविष्य की ओर कदम बढ़ाता बच्चा। कहने की आवश्यकता नहीं कि चिड़िया की उड़ान की सीमा है, फूल के खिलने के साथ उसकी परिणति निश्चित है, लेकिन बच्चे के सपने असीम है। बच्चों के खेल में किसी प्रकार की सीमा का कोई स्थान नहीं होता। कविता भी शब्दों का खेल है और शब्दों के इस खेल में जड़, चेतन, अतीत, वर्तमान और भविष्य सभी उपकरण मात्र हैं। इसीलिए जहाँ कहीं रचनात्मक ऊर्जा होगी वहाँ सीमाओं के बंधन खुद-ब-खुद टूट जाते हैं। वो चाहें घर की सीमा हो, भाषा की सीमा हो या फिर समय की ही क्यों न हो।*

दूसरी कविता है ***बात सीधी थी पर*** *जो* ***कोई दूसरा नहीं*** *संग्रह में संकलित है। कविता में कथ्य और माध्यम के द्वंद्व उकेरते हुए भाषा की सहजता की बात की गई है। हर बात के लिए कुछ खास शब्द नियत होते हैं ठीक वैसे ही जैसे हर पेंच के लिए एक निश्चित खाँचा होता है। अब तक जिन शब्दों को हम एक-दूसरे के पर्याय के रूप में जानते रहे हैं उन सब के भी अपने विशेष अर्थ होते हैं। अच्छी बात या अच्छी कविता का बनना सही बात का सही शब्द से जुड़ना होता है और जब ऐसा होता है तो किसी दबाव या अतिरिक्त मेहनत की ज़रूरत नहीं होती वह सहूलियत के साथ हो जाता है।*

कविता के बहाने

कविता एक उड़ान है चिड़िया के बहाने
कविता की उड़ान भला चिड़िया क्या जाने
        बाहर भीतर
        इस घर, उस घर
कविता के पंख लगा उड़ने के माने
चिड़िया क्या जाने?

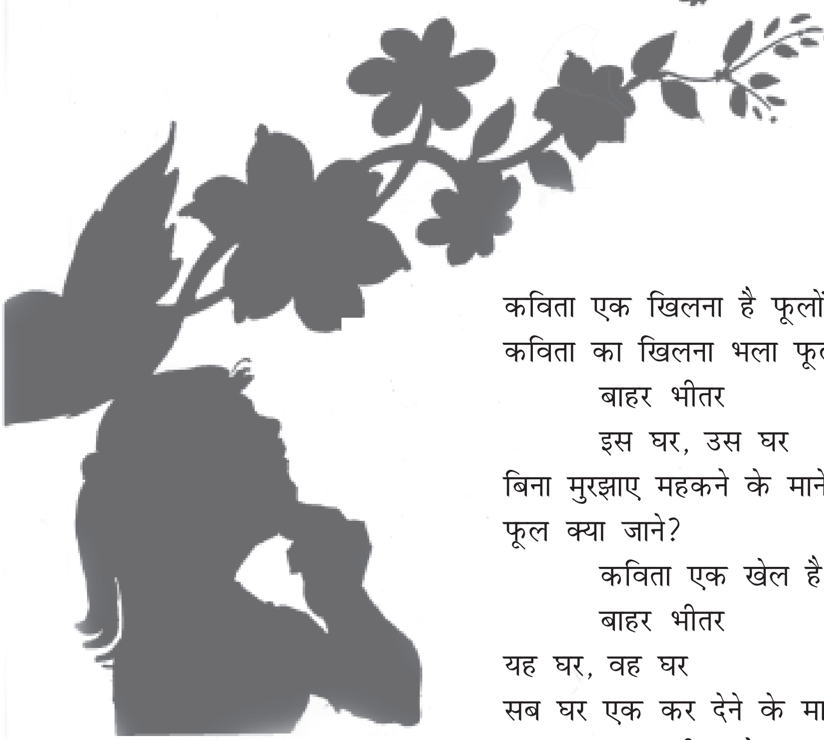

कविता एक खिलना है फूलों के बहाने
कविता का खिलना भला फूल क्या जाने!
        बाहर भीतर
        इस घर, उस घर
बिना मुरझाए महकने के माने
फूल क्या जाने?
        कविता एक खेल है बच्चों के बहाने
        बाहर भीतर
यह घर, वह घर
सब घर एक कर देने के माने
        बच्चा ही जाने।

बात सीधी थी पर

बात सीधी थी पर एक बार
भाषा के चक्कर में
ज़रा टेढ़ी फँस गई।

उसे पाने की कोशिश में
भाषा को उलटा पलटा
तोड़ा मरोड़ा
घुमाया फिराया
कि बात या तो बने
या फिर भाषा से बाहर आए–
लेकिन इससे भाषा के साथ साथ
बात और भी पेचीदा होती चली गई।

सारी मुश्किल को धैर्य से समझे बिना
मैं पेंच को खोलने के बजाए
उसे बेतरह कसता चला जा रहा था
क्यों कि इस करतब पर मुझे
साफ़ सुनाई दे रही थी
तमाशबीनों की शाबाशी और वाह वाह।

आखिरकार वही हुआ जिसका मुझे डर था
ज़ोर ज़बरदस्ती से
बात की चूड़ी मर गई
और वह भाषा में बेकार घूमने लगी!

हार कर मैंने उसे कील की तरह
उसी जगह ठोंक दिया।

ऊपर से ठीकठाक
पर अंदर से
न तो उसमें कसाव था
न ताकत!
बात ने, जो एक शरारती बच्चे की तरह
मुझसे खेल रही थी,
मुझे पसीना पोंछते देख कर पूछा–
"क्या तुमने भाषा को
सहूलियत से बरतना कभी नहीं सीखा?"

अभ्यास

कविता के साथ

1. इस कविता के बहाने बताएँ कि 'सब घर एक कर देने के माने' क्या है?
2. 'उड़ने' और 'खिलने' का कविता से क्या संबंध बनता है?
3. कविता और बच्चे को समानांतर रखने के क्या कारण हो सकते हैं?
4. कविता के संदर्भ में 'बिना मुरझाए महकने के माने' क्या होते हैं?
5. 'भाषा को सहूलियत' से बरतने से क्या अभिप्राय है?
6. बात और भाषा परस्पर जुड़े होते हैं, किंतु कभी-कभी भाषा के चक्कर में 'सीधी बात भी टेढ़ी हो जाती है' कैसे?
7. बात (कथ्य) के लिए नीचे दी गई विशेषताओं का उचित बिंबों/मुहावरों से मिलान करें।

बिंब/मुहावरा	विशेषता
(क) बात की चूड़ी मर जाना	कथ्य और भाषा का सही सामंजस्य बनना
(ख) बात की पेंच खोलना	बात का पकड़ में न आना
(ग) बात का शरारती बच्चे की तरह खेलना	बात का प्रभावहीन हो जाना
(घ) पेंच को कील की तरह ठोंक देना	बात में कसावट का न होना
(ङ) बात का बन जाना	बात को सहज और स्पष्ट करना

कविता के आसपास

* बात से जुड़े कई मुहावरे प्रचलित हैं। कुछ मुहावरों का प्रयोग करते हुए लिखें।

व्याख्या करें

* ज़ोर ज़बरदस्ती से
  बात की चूड़ी मर गई
  और वह भाषा में बेकार घूमने लगी।

चर्चा कीजिए

* आधुनिक युग में कविता की संभावनाओं पर चर्चा कीजिए?
* चूड़ी, कील, पेंच आदि मूर्त्त उपमानों के माध्यम से कवि ने कथ्य की अमूर्त्तता को साकार किया है। भाषा को समृद्ध एवं संप्रेषणीय बनाने में, बिबों और उपमानों के महत्त्व पर परिसंवाद आयोजित करें।

आपसदारी

1. सुंदर है सुमन, विहग सुंदर
   मानव तुम सबसे सुंदरतम।

   पंत की इस कविता में प्रकृति की तुलना में मनुष्य को अधिक सुंदर और समर्थ बताया गया है। 'कविता के बहाने' कविता में से इस आशय को अभिव्यक्त करने वाले बिंदुओं की तलाश करें।
2. प्रतापनारायण मिश्र का निबंध 'बात' और नागार्जुन की कविता 'बातें' ढूँढ़ कर पढ़ें।